IJAER/January-February 2013/Volume-2/Issue-1 ISSN: 2278-9677
International Journal of Arts & Education Research

2012प्राचीन ग्रीस में मिट्टी के बर्तन और मूर्तिकला

उर्मिला मीना

सहायक आचार्य, इतिहास विभाग, शहिद् कैप्टन रिपुदमन सिंह राजकीय महाविद्यालय

सवाई, माधोपुर

सार

प्राचीन ग्रीस अपनी समृद्ध कलात्मक विरासत के लिए प्रसिद्ध है, विशेष रूप से मिट्टी के बर्तनों और मूर्तिकला में, जो महत्वपूर्ण लेंस के रूप में काम करते हैं जिसके माध्यम से हम उस समय की सांस्कृतिक, सामाजिक और राजनीतिक गतिशीलता को समझ सकते हैं। यह शोधपत्र ज्यामितीय काल से हेलेनिस्टिक युग तक ग्रीक मिट्टी के बर्तनों के विकास की खोज करता है, जिसमें प्रत्येक चरण की विशेषता वाले तकनीकी नवाचारों और शैलीगत विकास पर जोर दिया गया है। यह न केवल कार्यात्मक वस्तुओं के रूप में बल्कि कहानी कहने, पौराणिक कथाओं और रोजमर्रा की जिंदगी के बर्तनों के रूप में भी मिट्टी के बर्तनों के महत्व पर प्रकाश डालता है, जो देवताओं, नायकों और दैनिक गतिविधियों को दर्शाने वाले जटिल दृश्यों से सजे होते हैं। समानांतर में, अध्ययन मूर्तिकला में प्रगति की जांच करता है, पुरातन काल के कठोर रूपों से शास्त्रीय काल के प्राकृतिक प्रतिनिधित्व में संक्रमण पर ध्यान केंद्रित करता है। यह उल्लेखनीय मूर्तियों का विश्लेषण करता है, जिसमें फिडियास और प्रैक्सिटेल्स जैसे प्रसिद्ध कलाकार शामिल हैं, और बाद के कला आंदोलनों पर उनके प्रभाव का विश्लेषण करता है। पुरातात्विक निष्कर्षों, प्रतीकात्मक विश्लेषण और ऐतिहासिक संदर्भ को एकीकृत करके, इस पेपर का उद्देश्य यह दर्शाना है कि प्राचीन ग्रीस में मिट्टी के बर्तन और मूर्तिकला किस तरह अपने रचनाकारों और उपभोक्ताओं के मूल्यों, विश्वासों और पहचानों को दर्शाते हैं। अंततः, इस युग की कलात्मक उपलब्धियों ने न केवल बाद की पीढ़ियों को प्रभावित किया, बल्कि समकालीन कलात्मक प्रथाओं और सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों में भी गूंजती रही।

मुख्य शब्दः *प्राचीन, मिट्टी, बर्तन और मूर्तिकला।*

परिचय

प्राचीन ग्रीस, जिसे अक्सर पश्चिमी सभ्यता का उद्गम स्थल माना जाता है, एक उल्लेखनीय कलात्मक विरासत समेटे हुए है जिसने पूरे इतिहास में कला, वास्तुकला और संस्कृति को गहराई से प्रभावित किया है। इसके सबसे महत्वपूर्ण योगदानों में मिट्टी के बर्तन और मूर्तिकला हैं, जो दोनों प्राचीन यूनानियों के सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक जीवन में अमूल्य अंतर्दृष्टि प्रदान करते हैं। मिट्टी के बर्तन, अपने विविध रूपों और जटिल सजावट के साथ, न केवल रोजमर्रा के उपयोग के लिए कार्यात्मक वस्तुओं के रूप में बल्कि कहानी कहने और कलात्मक नवाचार की अभिव्यक्ति के लिए कैनवस के रूप में भी काम करते थे। सरल पैटर्न और रूपांकनों की विशेषता वाले शुरुआती ज्यामितीय काल से लेकर शास्त्रीय और हेलेनिस्टिक काल के अधिक विस्तृत डिजाइनों तक, ग्रीक मिट्टी के बर्तन सदियों से कलात्मक तकनीकों और सामाजिक मूल्यों के विकास को दर्शाते हैं। दूसरी ओर, मूर्तिकला यूनानियों की सुंदरता, अनुपात और यथार्थवाद की खोज को दर्शाती है। पुरातन काल के कठोर और शैलीबद्ध रूपों से शास्त्रीय युग के प्राकृतिक प्रतिनिधित्व में परिवर्तन कलात्मक अभिव्यक्ति

में एक महत्वपूर्ण विकास को दर्शाता है। फ़िडियास और प्रैक्सिटेल्स जैसे मूर्तिकारों ने रूप और तकनीक की सीमाओं को आगे बढ़ाया, ऐसी कृतियाँ बनाईं जो मानवीय भावना, गति और आदर्श सौंदर्य को मूर्त रूप देती थीं। ये मूर्तियाँ अक्सर धार्मिक और नागरिक दोनों उद्देश्यों की पूर्ति करती थीं, मंदिरों, सार्वजनिक स्थानों और निजी घरों को सजाती थीं, जिससे ग्रीक समाज के सांस्कृतिक और वैचारिक ढाँचे को मज़बूती मिलती थी।

इस शोधपत्र का उद्देश्य प्राचीन ग्रीस में मिट्टी के बर्तनों और मूर्तिकला के बीच के अंतर्संबंधों का पता लगाना है, यह जाँचना कि कैसे ये कला रूप न केवल एक दूसरे के पूरक थे बल्कि ग्रीक जीवन की बदलती गतिशीलता को भी दर्शाते थे। प्रत्येक माध्यम से प्रमुख उदाहरणों का विश्लेषण करके और उन्हें उनके ऐतिहासिक संदर्भों में रखकर, हम प्राचीन ग्रीक लोगों की पहचान को आकार देने और प्रतिबिंबित करने में कला की भूमिका को बेहतर ढंग से समझ सकते हैं। इस अन्वेषण के माध्यम से, हम उन तरीकों को उजागर करेंगे जिनमें मिट्टी के बर्तन और मूर्तिकला एक सभ्यता की स्थायी विरासत के रूप में काम करते हैं जो आधुनिक दुनिया को मोहित और प्रेरित करना जारी रखती है।

प्राचीन भारतीय कलाओं में मूर्तिकला सर्वाधिक लोकप्रिय थी । यह मानव जीवन के अभिन्न अंग के रूप में लौकिक परंपराओं में व्याप्त थी । भारतीय जीवन के विभिन्न आदर्शों की प्रगति ही मूर्तिकला का उद्देश्य रहा है। 'कला कला के लिए' का सिद्धांत मूर्तिकला में विरले ही प्रयुक्त है। इसमें तो हमारी धार्मिक, दार्शनिक एवं सांस्कृतिक परंपराएँ समाहित हैं। धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष का संवर्द्धन ही भारतीय मूर्तिकला का आदर्श है। मूर्तिकला लौकिक आदर्शों का अनुगमन करती हुई सौंदर्यानुभूति में भी पूर्ण सक्षम है। यह मानव के सर्वांगीण विकास पर बल देती है। कभी-कभी यह मत व्यक्त किया जाता है कि मूर्तिकला धर्म प्रधान है।

यह सत्य है कि विश्व की समस्त कलायें धार्मिक परिधान में प्रस्फुटित हुई किंतु भारतीय मूर्तिकला मानव के निःश्रेयस सिद्धि के साथ जीवन के भौतिक पक्षों की उपेक्षा नहीं करती है। मूर्तिकलाकार ने प्रकृति के विभिन्न अंगों को आदर्श रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। उसकी अभिव्यक्ति में कलाकार की अनुभूति का दर्शन होता है। भारतीय मूर्तिकला विचार या भाव प्रधान मानी गई है। यह भावों को व्यक्त करने की अपेक्षा उसकी ओर संकेत अधिक करती है।

सैंधव सभ्यता में कला के विभिन्न रूपों का भी सम्यक् विकास हुआ था। हड़प्पाई कला के विविध पक्षों का विकसित रूप इस सभ्यता के विभिन्न स्थलों से पाये गये नगरों, भवनों के अलावा मूर्तियों, मुहरों, मनकों, मृद्भांडों आदि के निर्माण एवं उन पर उत्कीर्ण चित्रों में परिलक्षित होता है। सौंदर्य और तकनीक की दृष्टि से हड़प्पाई कला का भारतीय कला के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण योगदान है। सिंधु सभ्यता की मूर्तिकला की विवेचना हेतु इन्हें तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है-

प्राचीन भारतीय कला

- प्रस्तर मूर्तियाँ
- धातु मूर्तियाँ
- मृण्मूर्तियाँ

इसी श्रृंखला में कला की महत्ता की दृष्टि से सैंधव सभ्यता के पुरास्थलों से प्राप्त मुहरें, मनके तथा मृद्भांड एवं आभूषण आदि का अध्ययन भी आवश्यक प्रतीत होता है। ये कलाएँ सिंधु सभ्यता के लोगों की सुरूचि की परिचायिका हैं। सिंधु सभ्यता की प्रस्तर तथा धातु की उत्कृष्ट मूर्तियाँ तत्कालीन तकनीकी प्रगति की परिचायिका हैं। मृण्मूर्तियों एवं विस्मयकारी मुहरों का निर्माण अत्यंत कुशलता के साथ किया गया है। प्रस्तर मूर्तियाँ

सैंधव पुरास्थलों से प्राप्त पुरावशेषों से मृण्मयी मूर्तियों की तुलना में प्रस्तर निर्मित मूर्तियाँ कम ही प्राप्त हुई हैं। इन मूर्तियों के निर्माण में अलबस्टर, सेलखड़ी, चूना पत्थर, बलुआ पत्थर, स्लेटी- पत्थर आदि का उपयोग किया गया है, जिसमें से बारह मूर्तियाँ मोहनजोदड़ो से और तीन मूर्तियाँ हड़प्पा से प्राप्त हुई हैं। मोहनजोदड़ों से प्राप्त बारह प्रस्तर मूर्तियों में पाँच गढ़ीवाले टीले के एच. आर. क्षेत्र से प्राप्त हुई हैं। जिससे उस क्षेत्र का विशिष्ट महत्व इंगित होता है। इनमें से अधिकांश मूर्तियाँ खंडित हैं एवं आकार में भी अपेक्षाकृत छोटी हैं। इन मूर्तियों में कतिपय विशेष उल्लेखनीय हैं। इन मूर्तियों में सेलखड़ी की बनी लगभग 19 सेमी लंबी खंडित 'पुरुष मूर्ति' है। जिसमें कायभाग के साथ मस्तक भी सुरक्षित है परंतु हाथ टूटे हैं। जिसका सिर से वक्षस्थल तक का भाग सुरक्षित है। मूर्ति के नीचे का भाग खंडित है एवं इसके नेत्र लंबे तथा अधखुले हैं। दृष्टि नासाग्र पर केंद्रित है। माथा ढलुवा एवं छोटा है, होठ तथा गर्दन सामान्य से कुछ अधिक मोटी है।

संभवत: मेसोपोटामिया सभ्यता की कलाकृतियों में भी मोटी गर्दन बनाने का प्रचलन था । जान मार्शल महोदय ने यह मत व्यक्त किया है कि अपनी विशेषताओं से यह प्रस्तर मूर्ति किसी व्यक्ति विशेष की रूपाकृति प्रतीत नहीं होती और न ही वहाँ बसे किसी जाति विशेष का द्योतक माना जा समता है। परंतु इसके विपरीत मैके महोदय इस आकृति को पुजारी तथा आर. पी. चंद्रा महोदय 'योगी' का बताते हैं ।

बेबीलोन-सभ्यता में योगी या पुरोहित 'तीन - पतिया अलंकरण' के वस्त्र धारण करते थे । आदि पुराण में भी उल्लेख मिलता है कि, "नात्युन्मिषम् न चात्यंतनिमिषम" अर्थात् योगी की आँखें न तो पूरी बंद होनी चाहिए और न पूरी खुली। इस प्रस्तर की आकृतिवाले पुरुष के नेत्रों की स्थिति ठीक ऐसी ही है। इसलिए आर.पी. चंद्रा इसे योगी की मूर्ति मानते हैं। इसकी दाढी विशेष रूप से सँवारी हुई है, दाढ़ी के बाल पत्थर में लकीर काटकर बनाये गये हैं तथा मूँछें साफ हैं। इसका केश विन्यास अत्यन्त रोचक है।

संभवत: प्राचीन मेसोपोटामिया की कलाकृतियों की भाँति इस प्रस्तर मूर्ति में भी मूँछ मुड़ी हुई प्रदर्शित की गई है। केश-पाश पीछे की ओर सँवारकर एक फीते से बाँधे हुए हैं। नेत्रों में जड़ाऊ काम का स्पष्ट संकेत है। कान छोटे एवं गोल हैं। शाल से बायाँ कंधा ढँका है एवं दाहिना कंधा खुला है। जिसमें तिनफुलिया या तिनपतिया अलंकरण बना है। दाहिनी भुजा में जो भुजबंध है उसमें एक अलंकारिक वृत्त बना हुआ है।

सिंधु सभ्यता की मूर्तिकला

शिल्प की दृष्टि से इस मूर्ति का गठन बहुत आकर्षक एवं प्रभावशाली नहीं है। इसका केश विन्यास विशेष रूप से मोहक है, जिसे कलाकार ने पीछे से काढ़कर फीते से बँधा हुआ प्रदर्शित किया है। संभवत: इस मूर्ति पर किसी प्रकार का लेप लगाया गया था। मूर्ति के सजे-सँवरे बाल, दाढ़ी युक्त चेहरा, अर्द्धनिमीलित आँखें और तिफुलिया अलंकृत-वस्त्र सैंधव सभ्यता की सामान्य मूर्तियों से इसे अलग रूप में प्रस्तुत करते हैं।

मोहनजोदड़ों से अगभग 17.8 सेमी लंबा चूना पत्थर पर बना हुआ पुरुष का एक अन्य सिर भी मिला है। जिसके छोटे-छोटे बाल को पीछे की ओर केशबंध से बाँधा गया है । यद्यपि यह मूर्ति भी दाढ़ीयुक्त एवं मूँछें साफ किये हुए बनाई गई है । तथापि इसमें पहली मूर्ति जैसी कारीगरी का अभाव है। अलबेस्टर की बनी हुई 29 सेमी ऊँची बैठे हुए व्यक्ति की जो मूर्ति मिली है उसे कमर में 'पारदर्शी वस्त्र' पहने हुए दिखाया गया है । बायाँ घुटना ऊपर उठा हुआ दिखलाया गया है, जिस पर बायाँ हाथ रखा हुआ है। इसका सिर खंडित है । चेहरा तथा नाक आवश्यकता से अधिक लंबा दिखाया गया है, चेहरे पर नुकीली दाढ़ी भी है।

इन मूर्तियों के अतिरिक्त मोहनजोदड़ो से स्त्रियों के कुछ सुंदर सिर भी प्राप्त हुए हैं। एक लगभग 5. 5 इंच ऊँचे सिर में घुँघराले बाल दिखाये गये हैं। मोहनजोदड़ो से मानव मूर्तियों के अतिरिक्त पत्थर की बनी हुई कतिपय पशु - मूर्तियाँ भी मिली हैं। चूना पत्थर की बनी एच. आर. क्षेत्र से प्राप्त भेड़ा की मूर्ति लगभग 12 सेमी ऊँची है। कलात्मक दृष्टि से उल्लेखनीय वह मूर्ति है जो भेड़ा और हाथी की संयुक्त मूर्ति है। चूना पत्थर की यह मूर्ति लगभग 25 सेमी ऊँची है। शरीर और सींग भेड़ा का और सूँड़ हाथी का है। यह मूर्ति डी. के. क्षेत्र से प्राप्त हुई थी। इससे मिलती-जुलती संयुक्त आकृतियाँ मुहरों पर प्राप्त होती हैं। हड़प्पा से प्राप्त प्रस्तर मूर् हड़प्पा के उत्खनन से तीन उच्चकोटि की प्रस्तर मूर्तियाँ मिली हैं। ये तकनीक की दृष्टि से सिंधु सभ्यता की मूर्ति - परंपरा से नितांत भिन्न है। इनमें से एक लाल तथा दूसरी स्लेटी रंग के पत्थर पर निर्मित है। दोनों ही मूर्तियों में मस्तक और पैर टूट गये हैं। लाल प्रस्तर मूर्ति में शरीर का गठन बड़े ही सुंदर और स्वाभाविक रूप से प्रदर्शित किया गया है। मूर्ति पूर्णतः नग्न है। मूर्ति का उदर भाग ठीक वैसे ही ऊपर उठा हुआ है जैसा कि ऐतिहासिक युग की मूर्तियों में देखने को मिलता है। मूर्ति के दोनों कुहनी पर और गले में छिद्र बने हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि उस युग में सिर और अन्य अंगों को अलग-अलग निर्मित करने की प्रथा थी और इस मूर्ति में भी हाथ और सिर को अलग से निर्मित कर किसी मसाले द्वारा उन छिद्रों में जड़ा गया होगा । शिल्प की दृष्टि से उत्कृष्ट इस मूर्ति का निर्माण एक संतुलित अनुपात में किया गया है। इस मूर्ति में अद्‌भुत मांसलता है। मूर्ति खड़ी हुई मुद्रा में है। उसके पीन स्कंधों तथा संतुलित नितंबों की रेखाओं से मूर्तिकला की विकसित अवस्था का ज्ञान प्राप्त होता है। यद्यपि उत्खनन में वत्स महोदय को इसकी धड़ और भुजाएँ नहीं मिली थी ।

दूसरी मूर्ति जो स्लेटी रंग की है, का बायाँ पैर कुछ ऊपर उठा हुआ है और दीहिना पैर भूमि पर टिका है। कमर के ऊपर का भाग बांई ओर को घूमा हुआ है। दोनों हाथ भी नृत्य की मुद्रा में फैले हुए हैं। डा. वासुदेवशरण अग्रवाल महोदय ने इस मूर्ति के विभिन्न लक्षणों के आधार पर इसे नारी मूर्ति माना है। उनके अनुसार शरीर के विभिन्न अंगों का निम्नोन्त विभाग या उतार-चढ़ाव का बँटवारा और भारी नितंब भाग से स्पष्ट है कि यह स्त्री मूर्ति थी । समस्त शरीर का संतुलन दाहिने पैर पर है और बाँया पैर नृत्य - मुद्रा में दाहिनी ओर लयात्मक या तालात्मक प्रक्षेप में है, जिससे स्पष्ट है कि यह अवश्य ही मानवीय या दिव्य नर्तकी मुर्ति होगी ।

हड़प्पा से प्राप्त ये दोनों कबंध मूर्तियाँ सैंधव सभ्यता की विशिष्ट मूर्तियाँ हैं। इन मूर्तियों की सुंदरता को देखकर ज्ञात होता है कि उस काल के लोग तक्षण कला में कितने निपुण थे। यहीं नहीं उन्हें मानव शरीर के विभिन्न अंगों के गठन का भी पूरा-पूरा ज्ञान था, मूर्तियों में सौंदर्य-सौष्ठव के तत्वों की प्रधानता है। लाल पत्थर से निर्मित मानव मूर्ति को तो देखकर वत्स महोदय को भी इसके कुषाणकालीन होने का भ्रम हो गया था, किंतु इस मूर्ति प्राप्ति तीसरे स्तर सतह से काफी नीचे है।

प्राचीन भारतीय कला

प्रायः भारतीय कला में यथार्थता की उपेक्षा की बात कही जाती रही है और यथार्थ रूपांकन का श्रेय ग्रीक कलाकारों को दिया जाता है। ग्रीक मूर्तिकार मानव मूर्ति को स्वस्थ और निर्दोष शरीर के आधार पर गढ़ते थे। इस प्रयास में स्वाभाविकता का जितना अधिक सहारा लिया जाता था, कृति उतनी ही अधिक उत्कृष्ट समझी जाती थी । शरीर रचना विज्ञान पर पूरा ध्यान दिया जाता था। हड़प्पा की दोनों ही कबंध मूर्तियों में शारीरिक सौंदर्य की अनुपम अभिव्यक्ति हुई है। लाल पत्थर की मूर्ति में स्वस्थ और पुष्ट मानव शरीर का यथार्थ स्वरूप प्रतिबिम्बित हुआ है, अंग-प्रत्यंगों की समविभक्तता इस रूप में नियोजित है कि पाषाण की कठोरता समाप्त हो गयी है। मार्शल महोदय के अनुसार ई. पू. चौथी शती में कोई भी यूनानी कलाकार इन मूर्तियों को स्वनिर्मित कहने में गौरव समझता ।

मोहनजोदड़ो एवं हड़प्पा से प्राप्त पाषाण मूर्तियों की संरचना तथा शिल्प की दृष्टि से तुलनात्मक विवेचन करने पर स्पष्ट होता है कि मोहनजोदड़ो की पाषाण मूर्तियों में हड़प्पा की मूर्तियों के अनुपात और सौंदर्य का अभाव है। मोहनजोदड़ो के कलाकार मानवीय स्वरूप तथा विभिन्न अंगों को यथार्थ रूप में दिखाने में सफल नहीं हुए हैं। उदाहरणार्थ तिपतिया योगी मूर्ति के कान को इतना अधिक पारम्परिक शैली में प्रदर्शित कर दिया गया है कि सिर से अलग कर मानवीय कान के रूप में उसका अभिज्ञान करना सरल नहीं है। मोहनजोदड़ो की मानव मूर्तियों में शिल्पगत त्रुटियाँ भी दृष्टिगत होती हैं। हड़प्पा से प्राप्त पाषाण मूर्तियों के निर्माण में यथार्थ रूपांकन रूष्ट होता है।

धातु की मूर्तियाँ

सिंधु सभ्यता के अनुशीलन से यह स्पष्ट होता है कि तत्कालीन कलाकार 'धातुविद' भी थे क्योंकि धातु से निर्मित होनेवाली मूर्तिकलाओं की विभिन्न निर्माण पद्धति से पूर्ण परिचित थे। सिंधु घाटी का मूर्तिकार धातु-अयस्कों को पिघलाने और दो था। धातु की बनी मूर्तियाँ और मुहरें इस तुओं के मिश्रण से मिश्रित धातु बनाने की कला में पारंगत कांस्य धातु की मूर्तियाँ अभी तक मिली हैं।

मोहनजोदड़ो, चान्हुदड़ों, लोथल एवं कालीबंगाँ से हड़प्पा संस्कृति में मोहनजोदड़ो के एच. आर. क्षेत्र से प्राप्त 14 सेमी ऊँची कांस्य निर्मित नर्तकी की मूर्ति कला की दृष्टि से सर्वाधिक कलात्मक मानी जाती है। इस मूर्ति के पैरों के नीचे का भाग टूटा है। यह मूर्ति नग्न है। नर्तकी के हाथ एवं पैर लम्बे हैं, दाहिनी भुजा जिसमें बाजूबंद और कलाई में थोड़ी सी चूड़ियाँ हैं, कमर पर अवलम्बित है। बाईं भुजा जो कंधे से लेकर कलाई तक चूड़ियों से भरी है, के हाथ में एक पात्र है। मूर्ति की आँखें बड़ी किंतु अर्द्धनिमीलित प्रतीत होती है। उसके बाल अति कलात्मक ढ़ंग से सँवारे गये हैं। कंठ कंठाभरण से अलंकृत है। जिस पर तीन लटकनें हैं। उसके पैरों और भुजाओं के एक साथ सूक्ष्म ताल से यह ज्ञात होता है कि यह नृत्य में रत किसी नर्तकी की मूर्ति है। सिर थोड़ा-सा एक ओर झुका है तथा केश-पाश पीछे की तरफ एक वेणी में सँवारकर दाहिने कंधे पर लटकती छोड़ दी गई है। दुबली-पतली गात- यष्टि तथा क्षीण-कटि की मुद्रा, यह संकेत करती है कि यह नृत्य कला में अभ्यस्त किसी नर्तकी की मूर्ति है । इसकी शारीरिक गठन तथा अंग-सैष्ठव के आधार पर जान मार्शल महोदय का विचार है कि इस मूर्ति के द्वारा किसी आदिवासी नारी के यथार्थ रूपांकन का प्रयास किया गया है।

सिंधु सभ्यता की मूर्तिकला

स्टुअर्ट पिग्गट के अनुसार इस नर्तकी मूर्ति की मुखाकृति कुल्ली (बलूचिस्तान) से प्राप्त नारी मृण्मूर्तियों से बहुत कुछ मिलती है। वास्तव में इस कांस्य मूर्ति की कलात्मक सुगढ़ता प्राचीन समस्त कलात्मक जगत में अनूठी एवं अतुलनीय मानी गई है। पुरातत्ववेत्ताओं ने इस आकति को नर्तकी की संज्ञा प्रदान की है जो इसकी भाव-भंगिमा, अंगों के अभिराम, शरीर का लचीलापन आदि विशेषताओं को दृष्टिगत रखते हुए 'नर्तकी की अनुकृति' स्वीकार करना प्रासंगिक लगता है।

मोहनजोदड़ो कें एच. आर. क्षेत्र से प्राप्त उपरोक्त नर्तकी मूर्ति के अतिरिक्त दो कांस्य मूर्तियाँ और मिली हैं। इनमें भी आकृतियाँ नृत्य की मुद्रा में ही हैं, किंतु शिल्प की दृष्टि से बहुत अच्छी नहीं हैं। एक आकृति तो संभवतः किसी पीठिका पर थी। धातु निर्मित मानव मूर्तियों के अतिरिक्त कुछ पशु मूर्तियाँ भी मिली हैं जिनमें भेड़, वृषभ, भैंसे, कुत्ते, खरगोश आदि की मूर्तियाँ उल्लेखनीय हैं। इन धातु निर्मित पशु मूतियों में पशुओं की स्वाभाविक विशेषताओं का उत्तम अंकन हुआ है।

मोहनजोदड़ो से ताम्र से निर्मित एक अलौकिक कूबड़दार बैल का नमूना मिला है, जिसका मुँह नीचे की और झुका है और कान तथा सींग किसी कपड़े से बँधा प्रतीत होता है। पशु एक समूचे धातु के टुकड़े से काटकर बना है। इस मूर्ति में उसके मांसल शरीर, तनी हुई भृकुटी और ठूसा मारने की मुद्रा में सींग के प्रदर्शन के माध्यम से वृषभ शक्ति का स्वाभाविक अंकन है। क्रोध में तिरछे देखते हुए भैंसे की आकृति कला का सुंदर उदाहरण प्रस्तुत करती है। लोथल के उत्खनन के फलस्वरूप खरगोश, कुत्ते, आदि की ताम्र निर्मित मूर्तियाँ भी प्राप्त हुई हैं जिसमें पशुओं की स्वाभावगत चेष्टाओं का उत्तम निर्वाह किया गया है। इसी प्रकार कालीबंगा से प्राप्त 'ताम्रवृषभ मूर्ति' कलात्मक दृष्टि से अद्वितीय मानी जा सकती है। इस प्रकार 'धातु मूर्तियाँ न केवल सैंधव-सभ्यता की उच्चकोटि की कला का प्रदर्शन करती हैं अपितु कलाकारों की तकनीकी ज्ञान के वैशिष्ट्य का भी बोध कराती

मृण्मूर्तियाँ

कला के इतिहास के अनुशीलन से यह स्पष्टतया ज्ञात होता है कि विश्व की सभी प्राचीन संस्कृतियों में मृण्मूति - कला सर्वाधिक लोकप्रिय रही है। संभवतः यही कारण है कि सैंधव पुरास्थलों से प्राप्त शिल्प आकृतियों में मृण्मूर्तियाँ अधिक संख्या में मिली हैं। हड़प्पा की मृण्मूर्तियाँ वहाँ के सामान्य जन की अभिरूचियों को प्रतिबिंबित करती हैं। मिट्टी की बनी स्त्री, पुरुष, पशु तथा पक्षियों की मूर्तियाँ कला के विकास को व्यक्त करती हैं। अधिकांश मृण्मूतियों को हाथ से बनाया गया है, कुछ मूर्तियों को साँचे में ढालकर बनाया गया है। इनमें मानव मूर्तियाँ ठोस हैं जबकि पशु-पक्षियों की मूर्तियाँ प्रायः खोखली हैं। मृण्मूतियों के कलात्मक विश्लेषण एवं अध्ययन के लिए इन्हें तीन वर्गों में वर्गीकृत किया जा सकता है-

- पुरुष मृण्मूतियाँ
- नारी मृण्मूर्तियाँ
- पशु-पक्षियों की मृण्मूर्तियाँ

पुरुष मृण्मूर्तियाँ

सैंधव पुरास्थलों के उत्खनन से प्राप्त मिट्टी की बनी हुई मानव मूर्तियाँ अपनी लंबी नाक, ढलुआ सिर एवं ऊपर से चिकाये हुए मुख के कारण शिल्प की दृष्टि से बहुत उत्कृष्ट नहीं लगती हैं। कुछ मूर्तियों के सिर पर सींग भी प्रदर्शित किया गया है और साथ ही साथ सींगदार मुखौटे भी मिले हैं जो पीछे की ओर खोखले हैं और उनके किनारे पर छेद बना हुआ है। सैंधव मूर्तियों के निर्माण में साँचे का प्रयोग बहुत ही कम किया गया है।

सैंधव पुरास्थलों के उत्खनन से प्राप्त अवशेषों से मानव मृण्मूर्तियों के उदाहरण कम संख्या में मिले हैं । कतिपय अपवादों को छोड़कर अधिकांश मृण्मूतियों को नग्न रूप में प्रदर्शित किया गया है। पुरुष आकृतियों में कुछ खड़ी एवं कुछ बैठी हुई प्रदर्शित की गई है। बैठी हुई मानव मूर्तियाँ अपनी भुजाओं के द्वारा घुटनों को घेरे हुए अथवा हाथ जोड़े हुए मुद्रा में प्रदर्शित किया गया है। उनका सिर भी नग्न है। मोहनजोदड़ो

प्राचीन भारतीय कला

और चान्हुदड़ों से प्राप्त कुछ मानव आकृतियों के गले में एक धागा-सा दिखाई पड़ता है। संभवत: ताबीज आदि पहनने के लिए धागा धारण किया जाता रहा हो । मोहनजोदड़ो से प्राप्त एक मृण्मूर्ति में ठप्पें से निकाले हुए दो सिर जोड़े गये हैं। दोनों ही सिरों की मुखाकृति समान है। इस द्विभुज मूर्ति के गले से नीचे का भाग खंडित हो गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि इस मूर्ति के द्वारा किसी विशिष्ट देवता का अंकन अभीष्ट था । संभवत: अर्द्धनारीश्वर की कल्पना को मूर्त रूप देने का प्रयास किया गया हो । मेसोपोटामियाँ और मिस्र से भी दो मुखोंवाले देवताओं की मूर्तियाँ मिली हैं। यद्यपि यह द्विमुख देवता कौन है इसे बताना कठिन है। सींग धारण किये हुए मानव की कुछ मृण्मूर्तियाँ मोहनजोदड़ो एवं हड़प्पा के उत्खनन से प्राप्त हुई हैं। एक उदाहरण में तो जिसके सिर पर केवल एक ही सींग रह रह गया है, के गले में कालर जैसी वस्तु को दिखाया गया है। एक अन्य मृण्मूर्ति में सिर के ऊपर प्रदर्शित दोनों सींगों के अग्रभाग टूटे हैं। साँचे में ढालकर निर्मित कुछ सींगधारी मुखौटे भी मिले हैं जो पीछे की ओर खोखले हैं और उनके एक किनारे पर छेद बना है । ऐसा लगता है कि ये मुखौटे लकड़ी या अन्य किसी वस्तु पर लगाये जाते रहे होंगे। इस बात की भी संभावना है कि अपशकुन के भय से दरवाजों के ऊपर इन मुखौटों को लगाया जाता हो या जानवरों से खेतों की रक्षा के लिए इसे लगाया जाता रहा हो । संभवतः धार्मिक अवसरों पर इनका प्रयोग किया जाता था।

मोहनजादड़ो से प्राप्त मिट्टी की दो पुरुष आकृतियों को विद्वानों ने नर्तकों की मूर्तियाँ स्वीकार की हैं। इनके पैरों के घुमाव से पता चलता है कि वे नृत्य की मुद्रा में हैं। ऐसा नृत्य संभवतः किसी विशेष संप्रदाय के लोगों के मध्य प्रचलित रहा होगा। यह भी संभव है कि किसी विशेष उत्सव के अवसर पर पुरुषों द्वारा नृत्य किया जाता रहा हो। सैंधव पुरास्थलों से प्राप्त कुछ मिट्टी की मुहरों पर भी नृत्य के दृश्य दिखाये गये हैं । एक मुहर वर मनुष्यों को सामूहिक रूप में नृत्य करते हुए और एक व्यक्ति को ढोल बजाते हुए दिखाया गया है। संभवतः यह किसी देवी या देवता को खुश करने अथवा किसी विशेष उत्सव या धार्मिक आयोजन के लिए किया गया हो।

हड़प्पा के उत्खनन के परिणाम स्वरूप एम. एस वत्स महोदय को एक पुरुष मृण्मूर्ति का दाहिना भाग खंडित अवस्था में मिला है। इस मूर्ति की विशेषता यह है कि अन्य मृण्मूर्तियों के समान इसे नग्न न दिखाकर उसे फुल्लों से चित्रित वस्त्र धारण किये हुए प्रदर्शित किया गया है। मूर्ति के नाक में काफी उभार है, आँखें लंबी और माथा ढलुआँ है । उसके गले में चार लड़ियों से युक्त हार पड़ा हुआ है। जिससे स्पष्ट है कि नारियों की तरह पुरुष भी आभूषण धारण करते थे । मोहनजोदड़ो

तथा हड़प्पा से प्राप्त कुछ पुरुष मूर्तियों की ठुट्टियों पर दाढ़ी के बाल भी प्रदर्शित किये गये हैं। इसी क्रम में लोथल के उत्खन से दो महत्वपूर्ण पुरूष आकृतियाँ प्राप्त हुई हैं।

प्राचीन भारतीय कला

मातृदेवी की पूजा का प्रचलन युगों-युगों तक चलते रहने का एक कारण यह भी रहा कि यह एक ऐसी देवी थी, जिसकी ओर आसानी से व्यक्ति का ध्यान आकर्षित हो जाता है। मातृदेवी की पूजा का आरंभ धरती माता की पूजा से ही संभवतः हुआ होगा। ऐसा अनुमान है कि ये मृण्मूर्तियाँ संभवतः प्रजनन एवं उर्वरता के अनुष्ठान से संबंधित 'मातृदेवी' की आकर्षक कृतियाँ हैं। मिश्र और मेसोपोटासमिया की संस्कृति में भी 'मातृशक्ति की उपासना' लोकप्रिय थी ।

पशु मूर्तियाँ

सौंदर्य एवं तकनीक की दृष्टि से सैंधव सभ्यता की कला का भारतीय कला क्षेत्र में महत्वपूर्ण स्थान है । मानव मृण्मूतियों की तरह' हड़प्पा संस्कृति' में मिट्टी से बनी पशु-पक्षी की आकृतियाँ भी अत्यंत कलात्मक एवं आकर्षक जान पड़ती हैं। ऐसा अनुमान है कि सैंधव सभ्यता के पुरास्थलों से प्राप्त मूर्तियों में लगभग तीन चौथाई 'मृण्मूर्तियाँ पशुओं' की हैं। सर्वाधिक संख्या में पशु मूर्तियों की प्राप्ति का मूल कारण यह था कि सिंधु सभ्यता निवासियों के दैनिक जीवन में पशु-पक्षियों का महत्वपूर्ण उपयोग रहा।

सिंधु नदी के किनारे की भूमि उर्वर होने के कारण सैंधववासी व्यापक पैमाने पर कृषि कार्य करते थे, इसके लिए पशु ही सहायक रहा होगा। पशुओं में बैल, भैंसा, भेड़ा, बकरा, कुत्ता, हाथी, बाघ, गैंडा, भालू, सूअर, खरगोश, बंदर आदि की मूर्तियाँ मिली हैं। ये मूर्तियाँ अधिकांशतः चिकनी मिट्टी से बनी हैं। लेकिन मिट्टी से बने पशु मूर्तियाँ अधिकतर कम पकाये गये हैं। इनके ऊपर हल्के रूप में लाल पालिश का लेप किया गया है । कुछ उदाहरणों में हल्के पीले रंग का प्रयोग हुआ है। यह भी कहा जा सकता है कि इन पशुओं की सजावट में नाना प्रकार के रंग प्रयोग में लाये जाते थे। इन पशु आकृतियों में सबसे अधिक बैल की है। पुरातत्वविदो ने पहले इस संस्कृति के क्षेत्र में गाय तथा घोड़ें की अभाव माना था लेकिन डा. एस. आर. राव महोदय ने लोथल एवं रंगपुर के उत्खननों में इन दोनों पशु आकृतियों के मिलने का पुरातात्विक साक्ष्य प्रस्तुत कर दिया है। कुछ पशु मूतियाँ सेलखड़ी, सीप, हड्डी से बनी मिली हैं किंतु इनकी संख्या नगण्य हैं।

सिंधु सभ्यता का सबसे प्रिय पशु बैल था। बैलों की मूर्तियों में छोटे सींग वाले, बिना सींगवाले बिना कूबड़ तथा कूबड़दार दोनों ही प्रकार के बैलों की मूर्तियाँ पाई गई हैं। बैलों की जैसी उत्तम आकृति मोहरों पर है वैसी ही मिट्टी की बनी मूर्तियों में भी देखने को मिलता है। इसमें पशु के अंदर छिपी हुई ताकत, तगड़ी गर्दन, मजबूत मांसपेशियाँ, लटकते हुए गलकंबल और त्यौरीदार आँखें दर्शाई गई हैं।

मोहनजोदड़ो से प्राप्त वृषभ की बलिष्ठ मूर्ति विशेष रूप से दर्शनीय है। डीलवाले बैल की अपेक्षा बिना डीलवाले बैल की मृण्मूर्तियाँ अधिक संख्या में मिली हैं। चान्हुदड़ो की खुदाई से भी मिट्टी के बने अनेक बैलों की मूर्तियाँ मिली हैं। यहाँ से प्राप्त एक बैल के सींग के सिरे पर छिद्र बना है। संभवतः इसमें मुँदरी जैसी कोई वस्तु पहनाया जाता रहा हो । कालीबंगा से प्राप्त मूर्ति में बैल की आकृति को कलात्मक ढंग से आक्रामक मुद्रा में दिखाया गया है।

सैंधव सभ्यता के पुरास्थलों से प्राप्त मिट्टी के बने हुए अन्य पशु आकृतियों में हाथी, गैंडा, कुत्ता, सूअर, बंदर बकरा, भेड़, आदि हैं। हाथी की मूर्तियाँ बहुत ही कम मिली हैं। अधिकतर इसका चित्रण मुद्राओं सिंधु सभ्यता की मूर्तिकला / 9

पर ही किया गया है। चान्हुदड़ो से एक मिट्टी के हाथी की आकृति प्राप्त हुई है जिसके पीठ के अलंकरण से यह ज्ञात होता है कि यह किसी विशेष अवसर के लिए सजाया गया था। गैंडा की अनेक मूर्तियाँ मिली हैं। लोथल से गैंडे का एक सिर मिला है। बंदरों की मूर्तियों में अधिक स्वाभाविकता का दर्शन होता है। एक आकृति में घुटने पर अपने हाथ को रखे हुए बंदर को प्राकृतिक मुद्रा में दिखाया गया है। इन पशु मूर्तियों में चिकनी मिट्टी की बनी गिलहरियाँ भी दर्शनीय हैं। ये पूँछ ऊपर किये प्रायः पिछले पैरों पर बैठी खड़ी हैं। इनके पैरों के बीच में कोई खाद्य वस्तु है, जिसको कि वे हाथ से चुनकर खाती हुई प्रदर्शित है।

पकाई हुई मिट्टी के बने हुए खिलौने मोहनजोदड़ो, हड़प्पा, चान्हुदड़ो एवं अन्य सैंधव पुरास्थलों से प्राप्त हुए हैं, जिनके विभिन्न रूप कलाकारों के हाथ की कुशलता एवं कल्पना शक्ति का स्पष्ट परिचय मिलता है। पक्षियों में मोर, तोता, कबूतर, बत्तख, गौरैया, मुर्गा, चील, उल्लू आदि की मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं । पक्षियों के स्वाभाविक रंगों के अनुरूप उपयुक्त रंगों से रंगने के भी साक्ष्य मिले हैं। ठोस पहियों वाली खिलौना गाड़ियाँ, इक्के तथा सीटियाँ भी बनाई जाती थी । पाकिस्तान के चोलिस्तान तथा भारत के हरियाणा के हिसार जिले में स्थित बणावली से खेत की जुताई में प्रयुक्त होनेवाले हल के मिट्टी के खिलौने मिले हैं।

निष्कर्ष

मिट्टी के बर्तनों और मूर्तिकला में प्राचीन ग्रीस की कलात्मक उपलब्धियाँ सिर्फ़ एक बीते युग के अवशेष नहीं हैं, बल्कि सांस्कृतिक जटिलता और नवीनता से समृद्ध समाज की जीवंत अभिव्यक्तियाँ हैं। सदियों के दौरान, ग्रीक मिट्टी के बर्तन सरल ज्यामितीय पैटर्न से पौराणिक कथाओं और दैनिक जीवन के जटिल चित्रणों में विकसित हुए, जो समाज के मूल्यों, विश्वासों और सामाजिक प्रथाओं को दर्शाते हैं। प्रत्येक बर्तन एक कहानी बताता है, जो कार्यक्षमता और कलात्मकता के बीच परस्पर क्रिया को दर्शाता है, और प्राचीन ग्रीक संस्कृति में सामुदायिक और व्यक्तिगत पहचान के महत्व को उजागर करता है। इसी तरह, मूर्तिकला का विकास मानव रूप के उत्सव और भावनात्मक गहराई की खोज की ओर एक गहन यात्रा को प्रकट करता है। पुरातन काल की कठोर आकृतियों से शास्त्रीय और हेलेनिस्टिक युगों के गतिशील और यथार्थवादी निरूपणों में परिवर्तन न केवल तकनीक में प्रगति को दर्शाता है, बल्कि सुंदरता और मानव अनुभव की बदलती समझ को भी दर्शाता है। फ़िडियास और प्रैक्सिटेल्स जैसे मूर्तिकारों ने न केवल अपने समय के आदर्शों को पकड़ा, बल्कि भविष्य के कलात्मक प्रयासों के लिए आधार भी तैयार किया, जिसने दुनिया भर के कलाकारों की पीढ़ियों को प्रभावित किया। निष्कर्ष में, प्राचीन ग्रीस में मिट्टी के बर्तनों और मूर्तिकला के अध्ययन से कला, संस्कृति और समाज के बीच गहरे अंतर्संबंध का पता चलता है। इन कलात्मक रूपों ने अभिव्यक्ति का एक ऐसा साधन प्रदान किया जो उनके तात्कालिक कार्यों से परे था, जिससे हमें प्राचीन यूनानियों के जीवन, आकांक्षाओं और विश्वासों की झलक मिलती है। जैसे-जैसे हम इन विरासतों का पता लगाना जारी रखते हैं, हम समकालीन कला और संस्कृति पर उनके स्थायी प्रभाव को पहचानते हैं, जो हमें मानव रचनात्मकता की कालातीत प्रकृति और उन तरीकों की याद दिलाते हैं जिनसे कला दुनिया के बारे में हमारी समझ को प्रतिबिंबित और आकार दे सकती है।

संदर्भ

[1] "द कॉर्पस वासोरम एंटिकोरम ('प्राचीन फूलदानों का कॉर्पस') यूनियन एकेडेमिक इंटरनेशनेल की सबसे पुरानी शोध परियोजना है"। कॉर्पस वैसोरम एंटिकोरम . ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय . यूनियन एकेडेमिक इंटरनेशनेल। 16 मई 2011 को लिया गया।

[2] जॉन एच. ओकले (2012)। "ग्रीक आर्ट एंड आर्किटेक्चर, क्लासिकल: क्लासिकल ग्रीक पॉटरी," नील एशर सिलबरमैन एट अल. (एड्स), द ऑक्सफ़ोर्ड कम्पेनियन टू आर्कियोलॉजी, वॉल्यूम 1: एचे-होहो , दूसरा संस्करण, 641-644। ऑक्सफ़ोर्ड और न्यूयॉर्क: ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

[3] 1491 में एंजेलो पोलिज़ियानो द्वारा लोरेंजो को लिखे गए एक पत्र में निहित मौजूदा संग्रह के अतिरिक्त 3 फूलदानों की पेशकश की गई थी

[4] हालाँकि पहला अनुमान ए.एस. माज़ोचियस का है, इन रेगी हरकुलेनेंसिस मुसेई टैबुलस हर्कलीनस कमेंटरी , 1754-8, हालाँकि विंकेलमैन के पास हैमिल्टन संग्रह की पहली प्लेटों सहित अधिक संसाधनों तक पहुँच थी। देखें डी. वॉन बॉथमर, ग्रीक फूलदान-पेंटिंग इन पेपर ऑन द अमासिस पेंटर एंड हिज़ वर्ल्ड , 1987

[5] ग्रीक स्वतंत्रता संग्राम के बाद ग्रीक खोजों की तुलना इतालवी खोजों से करने की विद्वानों की क्षमता के कारण, हालांकि जी. क्रेमर, उबर डेन स्टाइल और डाई हेरुन्फ्ट डेर बेमाल्टेन ग्रिचिसचेन थोंगेफासे 1837 और ओटो जहान की वुलसी खोजों की सूची में पाठ्य विश्लेषण ने बदलती आम सहमति में योगदान दिया। कुक, ग्रीक पेंटेड पॉटरी , 1997,

[6] एरॉन जे. पॉल, फ़्रैगमेंट्स ऑफ़ एंटीक्विटी: ड्रॉइंग अपॉन ग्रीक वैस, हार्वर्ड यूनिवर्सिटी आर्ट म्यूज़ियम बुलेटिन, खंड V, संख्या 2 (स्प्रिंग 1997)

[7] एरॉन जे. पॉल, फ़्रैगमेंट्स ऑफ़ एंटीक्विटी: ड्रॉइंग अपॉन ग्रीक वैस, हार्वर्ड यूनिवर्सिटी आर्ट म्यूज़ियम बुलेटिन, खंड V, संख्या 2 (स्प्रिंग 1997)

[8] वुडफोर्ड, सुसान, ग्रीक कला का परिचय , 1986, डकवर्थ, आईएसबीएन 978-0801419942

[9] स्कॉट, नताली (30 मार्च 2011)। "1. प्राचीन अभिजात वर्ग के कब्र चिह्न"। कला 230: प्राचीन कला डिजिटल प्रदर्शनी.

[10] जॉन एच. ओकले (2012)। "ग्रीक आर्ट एंड आर्किटेक्चर, क्लासिकल: क्लासिकल ग्रीक पॉटरी," नील एशर सिलबरमैन एट अल. (एड्स), द ऑक्सफ़ोर्ड कम्पेनियन टू आर्कियोलॉजी, वॉल्यूम 1: एचे-होहो , दूसरा संस्करण, 641-644। ऑक्सफ़ोर्ड और न्यूयॉर्क: ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस। आईएसबीएन 978-0-19-973578-5

[11] वॉन बॉथमर, डिट्रिच (1962)। "पेंटेड ग्रीक वासेस" . मेट्रोपॉलिटन म्यूजियम ऑफ आर्ट बुलेटिन . **21** (1): 2. : 10.2307/3258463 . JSTOR 3258463 - JSTOR के माध्यम से।

[12] वॉन बॉथमर, डिट्रिच (1962)। "पेंटेड ग्रीक वासेस" . मेट्रोपॉलिटन म्यूजियम ऑफ आर्ट बुलेटिन .

[13] "ग्रीक पॉटरी" . विश्व इतिहास विश्वकोश . मूल से 2011-10-22 को संग्रहीत .

[14] "ग्रीक फूलदान बनाना" . खान अकादमी में स्मार्टहिस्ट्री ।

[15] "संग्रहीत प्रति" (पीडीएफ) . 2011-10-19 को मूल से संग्रहीत (पीडीएफ) । 2011-10-18 को पुनःप्राप्त ।